International Journal of Latest Emerging Multidisciplinary Research
Volume 1 ~ Issue 1 (Jan –June 2025) pp: 06-10
www.ijlemr.net

Research Paper

भारतीय दर्शन में आत्मतत्व की अवधारणा

सुरभी सिंह
शोध छात्रा
तिलकामांझी भागलपुर विश्वविद्यालय,बिहार

भारतीय दर्शन में सामान्य रुप से दो धाराएं दिखती है आत्मवाद एवं अनात्मवाद । आत्मवाद के अन्तर्गत समस्त हिन्दू दर्शन है और अनात्मवाद में बौद्ध एवं चार्वाक दर्शन है। जैन दर्शन दोनों का सम्मुचय करता है।[1]

सबसे पहले आत्मा शब्द का प्रयोग स्वभाव या किसी वस्तु की सत्ता (वस्तुत्व) या किसी वस्तु की एकता (किसी वस्तु का एक होना) के अर्थ में हुआ है और बाद में चलकर तत्व के अर्थ में आत्मा शब्द का प्रयोग होने लगा है।भारतीय दर्शन में आत्मा का सर्वस्व एवं सबका एक केन्द्र बिन्दु माना गया है। उपनिषद व ब्रह्मसूत्र में इस पर सबसे अधिक जोर दिया गया है।आत्मा के स्वरुप को लेकर भारतीय दर्शन में मुख्यतः चार प्रकार के मत पाये जाते है।[2]

1. भौतिकवादी विचार
2. अनुभववादी विचार
3. वस्तुवादी विचार
4. प्रत्ययवादी विचार

1. भौतिकवादी मत के अनुसार शरीर से भिन्न एवं पृथक आत्मा, मन, चैतन्य का अस्तित्व नही है। शरीर भौतिक है इसलिए इस मत को भौतिकवादी कहा जाता है इसे शरीरात्मवाद भी कहा जात है। इस मत के प्रबल समर्थक चावार्क है इन्होनें जड़ अथवा भूत को ही चरम तत्व माना है। इनकी दृष्टि में आत्मा भी भौतिक है। भौतिक तत्व से ही सभी वस्तुओं की उत्पत्ति होती है।[3]
2. आत्मा के विषय में अनुभववादी विचार के समर्थक बौद्ध दार्शनिक है। इनके मुताबिक शाश्वत कुछ भी नही है सब बदल रहे है। परिवर्तन प्रकृति का नियम है। बुद्ध ने आत्मा को चेतना का प्रवाह कहा है। अनुभव इस बाद का साक्षी है कि आत्मा का प्रतिबल परिवर्तन होता रहता है।[4]
3. वस्तुवादी विचार वैदिक काल से ही चला आ रहा है इसका आधार नैयायिक व वैशेषिको ने दिया है। उन्हें इस विचार का सृजनकर्ता माना जाता है। उनके अनुसार आत्मा एक अचेतन द्रव्य है। चेतना आत्मा का आकस्मिक लक्ष्ण है। न्यायवैशेषिक दर्शन की भाँति मीमांसको मे भी वस्तुवादी दृष्टिकोण को अपनाया है। परंतु इनका मत उनसे अलग है।[5]
4. प्रत्ययवादी या आदर्शवादी अवधारणा के समर्थक सांख्य – योग, वेदांत आदि है। इनकी दृष्टि में मानव अन्तर्निहित शाश्वत शक्ति या सार्वभौम चेतन तत्व ही आत्मा कहलाता है।[6]

सांख्य योग के अनुसार आत्मा चेतन है जिसमे किसी तरह का परिवर्तन नही होता है इसे साक्षी भी कहा गया है। सुकरात, प्लेटो अरस्तु सभी आत्मा को अमर बताते है। सांख्य दार्शनिको ने आत्मा को पुरुष शब्द से सम्बोधित किया है।[7]

अद्वैत वेदान्त के अनुसार आत्मा और ब्रह्म दोनों एक ही सत्ता के दो नाम है। छांदोग्य उपनिषद् मे बतलाया है कि अयमात्मा ब्रह्म्म अर्थात् आत्मा ही ब्रह्म है। आत्मा शुद्ध चेतन्य और प्रकाश स्वरुप है। यह ज्ञाता, ज्ञान और ज्ञेय से भी परे है। यह निर्गुण और निरपेक्ष सत्ता है। शंकरचार्य की दृष्टि में आत्मा के अतिरिक्त सब मिथ्या है। इनकी दृष्टि मे ईश्वर सगुण ब्रह्म नही है क्योंकि ईश्वर का एकतत्व बुद्धिगम्य नही है। शंकर ने तीन तरह की सत्ता का उल्लेख किया है।

1. प्रतिभाषिक सत्ता
2. व्यावहारिक सत्ता
3. पारमार्थिक सत्ता

पारिमार्थिक दृष्टि से केवल आत्मा ही सत्य है और सब मिथ्या है। आत्मा का खण्डन नही हो सकता क्योंकि ब्रह्म या आत्मा शुद्ध सत् है और सत् का खण्डन नही हो सकता। उनकी दृष्टि मे आत्मा सच्चिदानंद है। अर्थात् सत्, चित और आनंद से युक्त होना और आत्मा मे सत्, चेतना व आनंद तीनो ही पाए जाते है। शंकर की दृष्टि मे आत्मा एक है जबकि सांख्य दर्शन के अनुसार आत्मा अनेक है। सांख्य दर्शन ने प्रकृति को ही भी आत्मा की तरह वास्तविक माना। जबकि शंकर ने आत्मा के अतिरिक्त अन्य वस्तु की सत्ता को स्वीकार नही किया। अतः जीव आत्मा और ब्रह्म का अभेद ही अद्वैतवाद का सार है। सांख्य द्वैतवादी है और शंकर अद्वैतवादी है।[8]

अद्वैतवादियों से हटकर विशिष्टाद्वैतवादियों ने अपना मत व्यक्त किया है। इन्होनें जीवों की अलग सत्ता को स्वीकारा है। इनका मानना है कि जीवात्मा ब्रह्म का ही अंश है। इस मत के संस्थापक रामानुज की दृष्टि में जीवात्मा तीन प्रकार के होते है।

1. बद्ध जीव
2. मुक्त जीव
3. नित्य जीव

बद्ध जीव वे है जो अभी तक बंधन ग्रस्त है जो सांसरिक जीवन समाप्त नही कर सके है। यें जीव आवागमन के चक्कर मे फँसे रहते है।

मुक्त जीव वे जीव हैं जिन्होनें अपने ज्ञान, पुण्य और भक्ति द्वारा मोक्ष प्राप्त कर लिया है और नित्य जीव वे हैं जो बैकुंठ में निवास करते है और कर्म तथा प्रकृति से स्वतंत्र रहकर आनंद का उपभोग करते है वें हमेशा के लिए बंधन मुक्त हो जाता है। उनका ज्ञान कभी क्षीण नही होता है।

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट हो जाता है कि चार्वाक एवं बौद्धको छोड़कर सभी दार्शनिकों ने नित्य एवं व्यापक आत्मा की सत्ता को स्वीकार किया हैं। शंकर का दर्शन विद्वानो एवं ज्ञानियों तक सीमित रह गया है। किन्तु श्री रामानुज का दर्शन जनमानस का दर्शन बन गया है यही कारण है कि प्राच्य और पाश्चात्य दोनों जगहो में श्री रामानुज की महानता को स्वीकार किया गया है।

वेदों मे आत्मा का स्पष्ट उल्लेख नही है परंतु पुरुष तथा परमात्मा के रुप का उल्लेख नही है। आरण्यको मे तथा ब्राह्मण ग्रन्थों में आत्मा का स्वरुप स्पष्ट दिखाई देता है। शतपथ ब्राह्मण में मनुष्य के शरीर के मध्य भाग के लिए आत्मा शब्द का प्रयोग किया गया है। छांदोग्य उपनिषद में भी आत्मा के स्वरुप का वर्णन किया गया है। उपनिषद गीता, सांख्य योग एवं उत्तर मीमांसा में आत्मा के स्वरुप का विस्तृत विवेचन किया गया है। आत्मा का विश्लेषण करते हुए कहा गया है कि स्वपन एवं सुषुप्ति आत्मा की विभिन्न अवस्थाऐं है।[9]

मानव में आत्मा का तादाम्य सर्वप्रथम शरीर के साथ किया जाता है। इस तादात्म्यीकरण के अनुसार शरीर ही मानव का स्वरुप और सम्पूर्ण व्यक्तित्व है, किन्तु शीघ्र ही अनुभव कर लिया जाता है कि शरीर जो कि मरणधर्मा होने के साथ सूक्ष्म नही है, इसलिए मानव ने निरपेक्ष रुप से श्रेष्ठतम नही हो सकता। द्वितीय चरण में प्राणों को आत्मा माना गया है, जबकी तीसरे चरण में आत्मा को प्रज्ञा की तरह माना गया है। चतुर्थ अवस्था में आत्मा की कल्पना प्रत्यक्ष के सक्रिय विषयी और एक तात्विक दृष्टा के रुप में की जाती है।

भारतीय दर्शन में आत्मा को नित्य माना गया तथापि उसमें पाये जाने वाले राग, द्वेष, इच्छा, प्रयत्न आदि गुण अनित्य है। वस्तुतः आत्मा निर्गुण है। इन सभी गुणों कीी प्राप्ति आत्मा के शरीर को शरीर से सम्बद्ध होने पर ही होती है। आत्मा ज्ञाता है किन्तु वह ज्ञान का विषय नही होती। वह स्वतः प्रकाश न होकर जड़ है। अर्थात आत्मा ज्ञान से भिन्न है। आत्मा मे कर्म करने की शक्ति होने के कारण वह कर्ता है। आत्मा अचेतन है, किन्तु चैतन्य उसका आगन्तुक गुण है। आत्मा में चेतना का संचार मन, इन्द्रियों तथा बाहृय जगत के द्वारा होता है।[10]

स्पष्ट है भारतीय दर्शन में आत्मा जैसी सूक्ष्म विषयों का चिंतन अधिक मिलता है। भारतीय मनीषियों का चिंतन आत्म विषयक रहा है। सभी चिंतनो मे आत्मा केन्द्रिय सम्प्रत्यय है। आत्मा की अनुभूति अनुभवजन्य है। संसारावास्था में आत्मा और शरीर का दूध पानी की तरह लौह अग्निपिंड की तरह एकात्म संयोग होता है। इसलिए शरीर मे किसी वस्तु का संस्पर्श होने पर आत्मा मे संवेदन और कर्म का विपाक होता है। इस प्रकार हम देखते है कि भारत मे चिंतन के आरम्भ से आज तक आत्मतत्व शोध का विषय रहा है और भविष्य में भी रहेगा. हर युग के चिंतकों ने आत्मा विषयक विचारों को व्यक्त किया है भले ही कुछ दार्शनिकों ने आत्मा विषयक विचारो को व्यक्त किया हो पर आत्मा ने उनके विचार मथनं को अछूता नही छोड़ा है। आत्मा का अस्तित्व मानने वालो के लिए तो आत्म ज्ञान ही सर्वोच्च ज्ञान है, क्योंकि आत्मज्ञान ही मुक्ति का मार्ग है। साधना द्वारा आत्मतत्व का अनुभुव होता है जिसे विभिन्न रुपों मे अनुभव करने वालों ने व्यक्त किया है। इस प्रकार स्पष्ट है कि भारतीय दर्शन

*Corresponding Authorसुरभी सिंह

अध्यात्मवाद का प्रतिनिधितत्व करता है। यहा दार्शनिकों ने साधारणतया आत्मा को अमर माना है। सभी दर्शन किसी न किसी रुप मे आत्मा के सत्ता को स्वीकार करते है।[11]

भौतिकवादी मत के अनुसार शरीर से भिन्न एवं पृथक आत्मा, मन, चैतन्य का अस्तित्व नही है। शरीर भौतिक है इसलिए इस मत को भौतिकवादी कहा जाता है इसे शरीरात्मवाद भी कहा जात है। इस मत के प्रबल समर्थक चावार्क है इन्होनें जड़ अथवा भूत को ही चरम तत्व माना है। इनकी दृष्टि में आत्मा भी भौतिक है। भौतिक तत्व से ही सभी वस्तुओं की उत्पत्ति होती है।[3]

इस तादात्म्यीकरण के अनुसार शरीर ही मानव का स्वरुप और सम्पूर्ण व्यक्तित्व है, किन्तु शीघ्र ही अनुभव कर लिया जाता है कि शरीर जो कि मरणधर्मा होने के साथ सूक्ष्म नही है, इसलिए मानव ने निरपेक्ष रुप से श्रेष्ठतम नही हो सकता। द्वितीय चरण में प्राणों को आत्मा माना गया है, जबकी तीसरे चरण में आत्मा को प्रज्ञा की तरह माना गया है। चतुर्थ अवस्था में आत्मा की कल्पना प्रत्यक्ष के सक्रिय विषयी और एक तात्विक दृष्टा के रुप में की जाती है।

इन सभी गुणों कीी प्राप्ति आत्मा के शरीर को शरीर से सम्बद्ध होने पर ही होती है। आत्मा ज्ञाता है किन्तु वह ज्ञान का विषय नही होती। वह स्वतः प्रकाश न होकर जड़ है। अर्थात आत्मा ज्ञान से भिन्न है। आत्मा मे कर्म करने की शक्ति होने के कारण वह कर्ता है। आत्मा अचेतन है, किन्तु चैतन्य उसका आगन्तुक गुण है। आत्मा में चेतना का संचार मन, इन्द्रियों तथा बाह्य जगत के द्वारा होता है।

इन सभी गुणों कीी प्राप्ति आत्मा के शरीर को शरीर से सम्बद्ध होने पर ही होती है। आत्मा ज्ञाता है किन्तु वह ज्ञान का विषय नही होती। वह स्वतः प्रकाश न होकर जड़ है। अर्थात आत्मा ज्ञान से भिन्न है। आत्मा मे कर्म करने की शक्ति होने के कारण वह कर्ता है। आत्मा अचेतन है, किन्तु चैतन्य उसका आगन्तुक गुण है। आत्मा में चेतना का संचार मन, इन्द्रियों तथा बाह्य जगत के द्वारा होता है।

कसी वस्तु की एकता (किसी वस्तु का एक होना) के अर्थ में हुआ है और बाद में चलकर तत्व के अर्थ में आत्मा शब्द का प्रयोग होने लगा है।भारतीय दर्शन में आत्मा का सर्वस्व एवं सबका एक केन्द्र बिन्दु माना गया है। उपनिषद व ब्रह्मसूत्र में इस पर सबसे अधिक जोर दिया गया है।आत्मा के स्वरुप को लेकर भारतीय दर्शन में मुख्यतः चार प्रकार के मत पाये जाते है।[2]

शतपथ ब्राह्मण में मनुष्य के शरीर के मध्य भाग के लिए आत्मा शब्द का प्रयोग किया गया है। छांदोग्य उपनिषद में भी आत्मा के स्वरुप का वर्णन किया गया है। उपनिषद गीता, सांख्य योग एवं उत्तर मीमांसा में आत्मा के स्वरुप का विस्तृत विवेचन किया गया है। आत्मा का विश्लेषण करते हुए कहा गया है कि स्वपन एवं सुषुप्ति आत्मा की विभिन्न अवस्थाऐं है।[9]

सन्दर्भ स्त्रोत

1. धीरेन्द्र वर्मा, हिन्दी साहित्य कोष भाग–1, वाराणसी 1985 पृ. 79
2. वही,
3. देवी प्रसाद चट्टोपाध्याय, व्हाट इज लिविंग एण्ड व्हाट ईंज डेड इन इन्डियन फिलासॉफी, पिपुल्स पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, पृ. 425
4. डॉ. एस. राधाकृष्नन : (अनुवादक श्री नन्दकिशोर गोभिल) भारतीय दर्शन भाग–1, राजपाल एण्ड संस, 1973 पृ. 343
5. एस. कुप्पूस्वामी शास्त्री, ए प्राईमर ऑफ इण्डियन लॉजिक, कुप्पूस्वामी शास्त्री रिसर्च इन्सटीट्यूट मद्रास, 1961, पृ. 6
6. धीरेन्द्र वर्मा, हिन्दी साहित्य कोष भाग–1, पृ. 80
7. विज्ञान भिक्षु सांख्य दर्शनम, चौखम्बा संस्कृत सीरिज ऑफिस, बनारस, 1928, पृ. 67,68
8. श्री हरि कृष्णदास गोयन्दका : शंकरभाग्य, पृ. 159
9. एस.एन.दास गुप्त : ए हिस्ट्री ऑफ इण्डियन फिलासॉफी, मोतीलाल बनारसीदास दिल्ली, पृ. 75
10. वही, 7
11. वही. 3

*Corresponding Authorसुरभी सिंह